आधुनिक युग में मानव अधिकारों का विकास

* गोमतेश्वर पाल

स्त्री और पुरुष दोनों सामाजिक प्राणी हैं। वे अकेले नहीं रह सकते है।[1] दो प्राणियों ने परिवार को जन्म दिया इसी के साथ मानव की समूह में रहने की प्रवृत्ति पैदा हुई। यही से सामूहिक जीवन की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गयी। एक सामाजिक प्रक्रिया प्रारम्भ हो गयी। इस सामाजिक प्रक्रिया को बनाये रखने के लिए विधि और नियम का निर्माण किया गया था। जब किसी ने इस विधि और नियम के विरूद्ध कार्य किया और न्यायोचित कोई संस्था नही होने के कारण मानवाधिकारो के उल्लंघन का सिलसिला प्रारम्भ हो गया।

राज्यों की उत्पत्ति के साथ ही इनकी सीमाएं निर्धारित हो गयी। राज्यों द्वारा सीमा के अन्दर शक्ति और सुरक्षा के लिए बड़ी बड़ी सीमाएं बनाई गयी। कृषकों और व्यापारियों से कर वसूल करने के लिए कर्मचारी नियुक्त किये गये। कर्मचारी कर वसूलने के नाम पर दण्डस्वरूप शारीरिक कष्ट देते थे, सम्पत्ति को हड़पकर बना दास के रूप में जीवन जीने के लिए छोड़ देते थे।

मानव अधिकारों का विकास प्राचीन यूनान और रोम में हुआ है। सर्वप्रथम मानव अधिकारों की व्याख्या, स्ट्राइक, दार्शनिकों ने मानवाधिकारों के रूप में किया था। सुकरात, प्लेटो और सिसरों के मानवाधिकार सम्बन्धी विचार प्राकृतिक कानून और राजनैतिक आर्दश की अवधारणा में मिलते हैं। सिसरो का विचार है, प्राकृतिक कानून को मानव द्वारा निर्मित कानूनों द्वारा रद् करना नैतिक रूप से कभी भी उचित नहीं हो सकता है।[2] प्राकृतिक कानून मानव निर्मित कानून से ऊपर है क्योंकि ये कानून शावश्त हैं।

मानवाधिकारों का वैधानिक रूप से विकास 1215 ई0 में ब्रिटेन में हुआ है। ब्रिटेन के सम्राट, जान ने नागरिको की स्वतन्त्रता सम्बन्धी अधिकार पत्र अथवा मैग्नाकार्टा की घोषणा की थी। ह्यूगो ग्रोसियस (1583–1645

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर, समाजशास्त्र, राजकीय पी0जी0 कालेज, नोएडा।

ई0) की नैसर्गिक शिक्षा का विधान, अधिकार पत्र (1628 ई0) ब्रिटिश अधिकार पत्र (1689 ई0) 1776 का पेंन्सिलवेनिया घोषणा पत्र, फ्रेंच का मेसाच्यूट घोषणा पत्र (1789) वर्जीनिया का बिल ऑफ राइट ने इसे और पुष्ट बनाया है। यद्यपि मानवाधिकार के विकास की विधियां ईसा पूर्व में भी देखने को मिलती है। लैगास के यूरूका गीना (3260 ई0पू0), अक्कड़ के सारगोन (2300 ई0 पू0) और बेबीलोन के हम्बूराबी (1792–1750 ई0पू0) वैदिक काल के धर्म (1500–500 ई0पू0) आदि मानवाधिकारों का संरक्षण करते है।[3]

प्राचीन समय में मानवाधिकारों को संवैधानिक रूप से लिपिबद्ध रूप देना ही था। राजा का आदेश ही कानून होता था। ये कानून व्यक्ति की अपेक्षा राजशाहों को अधिक संरक्षित करता है।[4] धर्म ने भी राजशाही सत्ता को अपना समर्थन दे रखा था। उसने राजा को ईश्वर का प्रतिनिधि बनाया। राजा सर्वशक्तिमान हो गया। सिंहासन पर आलसी और बुद्धिहीन राजाओं का चयन हो गया और वे निरंकुश हो गये। पोप ग्रेगरी सप्तम् ने रोमन साम्राज्य की निरंकुश नीतियों का विरोध किया। 'आन्तरिक विद्रोह एवं नेपोलियन के आक्रमण से रोमन साम्राज्य का पतन हो गया तथा सामन्ती राज्यों (476 ई0 1500ई0) का उदय हो गया। सामंतवादी व्यवस्था ने श्रमिकों और कृषको का प्रयोग अपने हित में किया। हित में अभिवृद्धि के लिए उनका शोषण भी करना शुरू कर दिया। उनकी स्थिति बद्तर हो गयी।[5] सामन्त अब अन्नदाता हो गये। कृषक और श्रमिक अन्नदाता के दास हमेशा के लिए बन गये।

राजशाही सत्ता और पोपशाही की आलोचना की गयी और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और मानवीय पहलुओं को स्थापित करने में मध्यकालीन विचारकों का योगदान रहा है। सन्त एक्बीनास (1227–1274 ई0) जान आफ पेरिस (1263–1306 ई0), मार्सीलियो ऑफ पेडुआ (1278–1343 ई0), मैकिया वली (1469–1527 ई0), जीन वोदा (1530–1596 ई0), थामस हाब्स (1558–1679 ई0), जानॅ लॉक

(1632–1704 ई0), जे0 जे0 रूसो (1712–1778 ई0) आदि प्रमुख विचारकों ने मानवीय तर्क के आधार पर प्राकृतिक कानूनों की अवधारणा को आगे बढ़ाया है।[6]

सन्त एक्बीनास मध्यकालीन विचारधारा का प्रतिनिधित्व करता है। उसने सन्त ऑगस्टाइन के विचारों की आलोचना की और पोपशाही सत्ता के खिलाफ विद्रोह का बिगुल बजा दिया था। उसने अरस्तू के ऐतिहासिक सुख के दर्शन को स्वीकार किया है और कहा है कि मानव जीवन का इससे बड़ा एक लक्ष्य़ होता है, जिसकी तुलना में यह सुख गौण है और वह है मुक्ति प्राप्त करना।[7] मनुष्य राज्य में रहकर अपना पूर्ण विकास कर सकता है। राज्य श्रेष्ठ है क्योंकि रीति रिवाजों की एकता और समानता पायी जाती है। यह दृष्टिकोण मानवाधिकार के क्षेत्र में परिपक्व दृष्टिकोण था।

सन्त एक्बीनास ने मानव के विकास के दो प्रकार बताये हैं प्रथम, भौतिक सुख की प्राप्ति दूसरा आध्यात्मिक सुख। व्यक्ति को इन सुखों को प्राप्त करने के लिए चार प्रकार के कानूनों का पालन करने की सलाह दी –

1. शाश्वत कानून
2. प्राकृतिक कानून
3. मानवीय कानून
4. दैवीय कानून

कानून के चार प्रकार विवेक के ही चार रूप हैं ये भिन्न व्यवस्था के चार स्तरों पर अपने आप को प्रकट करते हैं।[8] 'शाश्वत कानून, ईश्वरीय ज्ञान है जिसके द्वारा प्रकृति की सृष्टि की जाती है और जो प्रकृति एंव ब्रह्माण्ड पर नियन्त्रण रखता है। सृष्टि के सभी जीवों के अन्तर्गत मानव, पशु और वनस्पति आदि इसी कानून के अधीन है।[9] ये कानून मनुष्य के विवेक से ऊपर है वह इसे आभास कर सकता है समझ नहीं सकता है सन्त एक्बीनास का शाश्वत कानून में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवीय कानून की व्यस्था करता है।

प्राकृतिक कानूनों की उत्पत्ति शाश्वत कानूनों से हुई है। ये कानून

सरल, स्पष्ट और बोधगम्य होते है। शाश्वत कानूनों के समान प्राकृतिक कानून भी सम्पूर्ण विश्व में पाये जाते है प्रत्येक जीव, पौधे, अचेतन रूप से कार्य करते हैं और मनुष्य विवेक के साथ इसका प्रयोग करता है। अरस्तू ने लिखा है' मानव ऐसे जीवन की इच्छा करता है, जिसमें विवेकीय स्वभाव की सिद्धि हो।'[10]

दैवीय कानून वे कानून हैं, जब व्यक्ति का विवेक शून्य हो जाता है और बुराइयां उत्पन्न हो जाती हैं तो बुराइयों को दूर करने के लिए ये कानून व्यक्ति की आत्मा को निर्देशन देने का कार्य करती हैं। हैकूर के अनुसार 'दैवी कानून नागरिकों और प्रशासकों को उन क्षेत्रों में प्रेरित करने का ईश्वरीय तरीका है जहाँ मानवीय कानून नहीं पहुँच पाते हैं।[11]

'मानवीय कानून प्राकृतिक कानून पर आधारित होते है।[12] जिनका प्रयोग भय व्याप्त करके समाज में शक्ति की स्थापना करने हेतु की जाती है। मानवीय कानून प्राकृतिक कानूनो द्वारा परिभाषित किये जाते है। जैसे चोरी हत्या, एक पाप है।

मैकियावली का जन्म यूरोप के नवजागरण काल में हुआ था। मैकियावली पहला आधुनिक राजनीतिक विचारक था जिसने धर्म और पोप की सत्ता को अलग–अलग करके राज्य को सर्वोच्च इकाई के रूप में स्थापित किया है। धर्मनिरपेक्षता राज्य की सर्वोच्चता होगी। प्रत्येक व्यक्ति मानवीय स्वतन्त्रता और मानवीय अधिकारों को प्राप्त करने हकदार है। उसका विचार है। नागरिक अधिकारों के निर्माण में राज्य अपनी भूमिका अदा करे।'' इस प्रकार राजनैतिक संरक्षण की वकालत कर मानव अधिकारों को मजबूत आधार प्रदान किया है। बांदा ने राजाओं को अपने क्षेत्र का सम्प्रभु बताया है[13] जो परम्पराओं और नैतिक नियमों से बंधा है। उसके अनुसार – राज्य के सभी व्यक्ति जो नागरिक होगे वे सम्प्रभु के अधीन होगें। राज्य दास नाम का शब्द तक नहीं होगा। अस्तु, मध्यकाल में नागरिक अधिकारों की चर्चा की गई है।

17वीं शताब्दी में ब्रिटेन में गृहयुद्ध छिड़ गया था। थामस हॉब्स

ब्रिटेन के युद्धकाल का दार्शनिक था। उसने गृहयद्ध का चित्रण इंग्लैण्ड निवासी ब्लैकस्टन ने अपनी पुस्तक कमेण्ट्रीज ऑन लाग आफ इंग्लैण्ड में मानवीय अधिकारों की चर्चा प्राकृतिक विधि के रूप में, प्राकृतिक अवस्था से की है। उसने लिखा है कि हम मानव स्वभाव में संर्घष के तीन प्रमुख कारण देखते हैं– प्रतिस्पर्द्धा, भय और यश। प्रतिस्पर्द्धा के कारण वे लाभ के लिए, भय के कारण रक्षा, यश के कारण प्रसिद्धि के लिए निरन्तर संघर्ष करते रहते हैं।[14] हाब्स का मानना है कि लोग संघर्ष की अवस्था से निकलने के लिए राजा को और अधिक शक्ति प्रदान की। राजा ने वचन दिया कि हम आपकी सुरक्षा करेंगे यदि हम इस वचन को निभानें में असमर्थ हो जाते है तो तुम मेरा विरोध कर सकते हो। 'वह व्यक्ति को जीवन रक्षक, स्वतन्त्रता का अधिकार देता है।[15] राज्य अपने नागरिकों यह अधिकार स्वेच्छा से देता है। अधिकार कानून द्वारा मर्यादित होने चाहिए अन्यथा व्यक्तियों के अधिकारों का हनन हो जायेगा।

18 वीं शताब्दी ने जॉन लॉक, रूसो मांटेस्क्यू और वाल्टेयर आदि विचारकों ने मानवीय तर्क के आधार पर प्राकृतिक कानूनों की वैधता, एवं आवश्यकता को और अधिक स्पष्ट किया है। जॉन लॉक उदारवाद का जनक है और ब्रिटेन की गौरवपूर्ण क्रान्ति का शिशु है। लॉक प्राकृतिक कानून का समर्थक था। प्राकृतिक अवस्था में मनुष्यों को तीन प्रकार के अधिकार प्राप्त थे–जीवन, स्वंतत्रता तथा सम्पत्ति का अधिकार। व्यक्ति अपना जीवन प्राकृतिक अवस्था के अनुसार व्यतीत करता था। सरकार की तुलना में व्यक्ति अधिक शक्तिशाली है। हारमोन ने लिखा' सरकार को जनता के समान अधिकार प्राप्त नहीं, सरकार के जनता के प्रति कर्तव्य ही हैं।' उसका विचार है कि कोई उन्हे दासता की दिशा की ओर ले जाने का प्रयत्न करें उन्हें यह अधिकार होगा कि वह अपने को मुक्त कर ले।''[16] जनता को चाहिए कि वह राजा के आदेशों और नीतियों पर नजर रखे और गलती करने पर उसका विरोध करें।

1789 की फ्रांसीसी की क्रान्ति प्रेरणा स्वरूप रूसो स्वतन्त्रता का

समर्थक था। उसने एक नारा दिया' मनुष्य स्वंतत्र पैदा होता है किन्तु वह सर्वत्र जंजीरों से जकड़ा होता है। सामाजिक व्यवस्था और भौतिक परिस्थितियों ने व्यक्ति की स्वतंत्रता छीनकर दास बना दिया है। दासता से मुक्ति पाने के लिए उसने राज्य के सभी नागरिकों को 'सामान्य इच्छा' का समर्थन करने को कहा। सामान्य इच्छा समाज की आदर्श इच्छा है जिसके कारण सभी का कल्याण सम्भव है। नागरिकों की सामान्य इच्छा के अनुसार कानून निर्माण होगा और लागू भी किया जायेगा। बोसांके ने कहा है कि 'सामान्य इच्छा सम्पूर्ण समाज की सामूहिक अथवा सभी व्यक्तियों की ऐसी इच्छाओं का समूह है, जिसका लक्ष्य सामान्य हित की पुष्टि हो।[17] सामान्य इच्छा का प्रभाव फ्रांस के नागरिकों पर पड़ा। जनता को सामूहिक शक्ति द्वारा मानव अधिकारों का दावा करके चुनौती दी गई। 'फ्रांसीसी क्रान्ति के नारे थे– स्वतंत्रता, समानता और बन्धुत्व। क्रान्ति के बाद अधिकारों की घोषणा मानवाधिकारों की साक्षी है, जिन्हें मनुष्य का अधिकार' कहा जाता है।

लॉक और रूसों द्वारा दिये गये विचारों से न केवल फ्रांस मे ही क्रान्ति हुई बल्कि वर्जीनिया में क्रान्ति (1776) हुई थी। क्रान्ति के बाद वर्जीनिया में भी बिल ऑफ राइटस की घोषणा की गई। 1776 पेनसिलवेनिया में घोषणा पत्र, मेरी लैण्डी, न्यूजर्सी में नवीन संविधान की घोषणा जिसमें मौलिक अधिकारों की घोषणा की गयी। 1789 मेसाच्यूट घोषणा पत्र में भी मौलिक अधिकारों की घोषणा की गयी।

19वीं शतब्दी के मध्य में आर्थिक सुरक्षा व आर्थिक सामाजिक न्याय की मांग बढीं। इस सदी की समाजवादी तान्त्रिक एंव उदारतावादी सदी के नाम से जाना गया। 1917 बोल्शेविक क्रान्ति ने यह सिद्ध कर दिया कि राजनैतिक अधिकारों के साथ आर्थिक और सामाजिक सुरक्षा के अधिकार मिलने चाहिए। 19वीं सदी के मध्य में यूरोप व उत्तरी अमेरिका में औद्योगिक व पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के विकास ने इन अधिकारों का महत्व बढा दिया। सामान्य व उद्योगपति कम मजदूरी पर अधिक काम लेते थे। भारत में

सामान्तः अपने दासों को बासी खाना देते थे। और कपड़ा आधा तन ढकने के लिए देते थे। वर्तमान काल में राज्य का उद्देश्य न्यूनतम मजदूरी है।

जरेमी बेन्थम (1748 ई0–1832 ई0) में उपयोगितावाद के दर्शन को विकसित किया। बेन्थम का उपयोगितावादी सिद्धान्त व्यक्ति को अधिकतम सुख देने के पक्ष में है। उसका विचार है कि राज्य ऐसा कार्य करे जिसमें व्यक्ति को अधिकतम सुख प्राप्त हो।' अधिकतम सुख मानव कल्याण से जुड़ी मानव अधिकार की एक कड़ी है। 'मिल' अपने स्वतन्त्रता सम्बन्धी विचार में' सभी व्यक्तियों को विचाराभिव्यक्ति की पूरी–पूरी स्वतन्त्रता प्राप्त होनी चाहिए।[18] मिल का विचार है कि सभी व्यक्तियों के विचार समान होने चाहिए। यहाँ तक कि कोई पागल अथवा सनकी है तो उसका भी सम्मान होना चाहिए क्योंकि कभी–कभी ऐसे लोग गूढ और दूरदर्शिता की बात कह जाते है। सुकरात, ईसामसीह को पागल समझ कर मौत दे दी गयी यदि वे कुछ दिन और जिन्दा रहते तेा कुछ और रहस्य खोलते। मिल का विचार मानसिक और शारीरिक रूप से विंकलाग व्यक्तियो को अधिकार प्रदान करता है। 20 दिसम्बर 1971 में महासभा ने प्रेरणा लेते हुए मानसिक रूप से मंदित व्यक्तियों के अधिकारों की घोषणा प्रस्ताव पारित किया गया था।

19वीं शताब्दी में जहाँ एक ओर उदारवाद, व्यक्तिवाद और लोकतन्त्र की लहर दौड़ रही थी वहीं दूसरी ओर कांट, फीक्अे और हीगल सर्वाधिकारवाद, अधिनायकवाद के विचार को फैला रहे थे। 20सदी में इटली में फासीवाद, जर्मनी में नाजीवाद के रूप में अधिनायकवादी ताकतों का उत्थान हो गया। हीगेल का विचार है, अन्तर्राष्ट्रीय कानून को कोई महत्व नही है क्योंकि युद्ध मानवता के विकास का महत्वपूर्ण साधन है।[19] वह अन्तर्राष्ट्रीय नैतिकता को अभिशाप मानता है। आज अमेरिका सहित यूरोप के देशों ने मानवाधिकार की आड़ में अपने राष्ट्रीय हित मे अभिवृद्धि की है। बंधुआ मुक्ति मोर्चा के प्रधान कार्यकर्ता स्वामी अग्निवेश ने ऐसा ही विचार दिया, आरम्भ में उन्होने अमेरिका, जर्मनी, अन्य यूरोपीय राष्ट्र बाल श्रम और बंधुआ श्रम के खिलाफ लड़ाई में मेरा साथ दिया, मगर जल्दी ही वे बाल श्रम

के विरूद्ध आर्थिक प्रतिबन्ध की बात करने लगे। फिर अमेरिका और फ्रांस की सरकारों ने विश्व व्यापार संगठन के बैनर तले सामाजिक प्रावधान में बलपूर्वक श्रम के विरूद्ध विलाप का प्रयोजन आरम्भ कर दिया।[20] इन देशों का उद्देश्य वस्तुओं का निर्यात हो आयात नहीं। 'वीरभोग्या वसुन्धरा' पृथ्वी के मौलिक शक्तिशाली हो सकते है। हीगेल भी राज्य को शक्ति का आधार बनाता है।

20 शताब्दी लोकतन्त्र की सदी कह जाती है। लोकतंत्र की सुरक्षा के लिए प्रथम विश्वयुद्ध हुआ था। शक्ति के लिए राष्ट्र संघ की स्थापना हुई। 'कमजोर राष्ट्र संघ और विभेद पूर्ण वर्साय की सन्धि ने विश्व के अनेक देशो में अधिनायकवाद की जड़े पुनः स्थापित हो गयी। 1922 में इटली मे मुसोलिनी द्वारा फासीवाद, जर्मनी में हिटलर द्वारा नाजीवाद, 1923 में स्पेन में प्राइमो डी रिवेरो, 1929 में पोलेण्ड में पिलड्यूस्कों एंव 1931 में रूमानिया के राजा कारोल ने अधिनायकवाद की स्थापना की।

राष्ट्र संघ की खुलकर धज्जियाँ उड़ायी गयी। मिश्र में कर्नल मासिर ने सवैधानिक राजतंत्र को समाप्त कर अधिनायकवाद की स्थापना की। टर्की, बुल्गारिया, पुर्तगाल और हंगरी में अधिनायकवाद आ गया। लीबिया, ईराक, अल्जीरिया, सीरिया मे सैनिक शासन कायम हो गया। पकिस्तान में अयूब खान ने इण्डोनेशिया में सुकर्णो ने सत्ता की बागडोर अपने हाथों हथिया ली।' अधिनायकवादियों का विचार है 'लोकतन्त्र एक सड़ती हुई लाश है, संसदें बकवास की दुकानें। राष्ट्र संघ द्वारा चलाये जा रहे अनेक कार्यक्रम असफल सिद्ध हो रहे थे। उसके पास ऐसी कोई शक्ति नहीं थी जिससे वह दण्डित कर सकता। राष्ट्र संघ के नष्ट होने के बाद संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना ही हो गई।

संदर्भ

1. मानव अधिकार और मीडिया, बालमुकुन्द श्रीवास्तव, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 1
2. पाश्चात्य राजनैतिक चिन्तन का इतिहास–डॉ पुखराज जैन,

साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा– 2008, पृ0 93

3. जी0 आर0 ड्राइवर एंव जे0 बी0 माइल्स द्वारा सम्पादित दि बेबीलोनियन लॉस, 1952– यस0 पी0 सिन्हा ह्यूमन राइट फिलासिफिकली, इंडियन जर्नल लॉ ऑफ इण्टरनेशनल लॉ, वाल्यूम 18 न0 2, पृ0 144
4. ए हिस्ट्री आफ पलिटिकल थ्योरी, जी0एच0 सेवाइन/पल थॉरसन, आक्सफोर्ड 8 आई0 बी0 एचं0 पब्लिसिंग न्यूार्क 1973, पृ0 22
5. ए हिस्ट्री आफ पलिटिकल थ्योरी, (पार्ट 1) डब्लू ई0 डनिंग 1970 पृ0 23 कारनेल युनिवसिर्टी प्रेस लन्दन प्रेस लन्दन
6. ए हिस्ट्री आफ पॉलिटिकल थ्योरी, जी0 एच0 सेवाइन/पल थॉरसन, आक्सफोर्ड 8 आई0 बी0 एचं0 पब्लिसिंग न्यूार्क 1973 पृ0 195
7. पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन का इतिहास–डॉ पुखराज जैन, फस्ट एडीशन, 2008 पृ0 97 साहित्य भवन पब्लिकेशन–आगरा
8. राजनीतिक दर्शन का इतिहास–सेवाइन खण्ड–पृ0 232 एल शासन आक्सफोर्ड, 1973
9. पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन का इतिहास–डॉ0 पुखराज जैन, फस्ट एडीशन, 2008 पृ0 102 साहित्य भवन पब्लिकेशन–आगरा
10. राजनीतिक दर्शन का इतिहास–सेवाइन खण्ड अनुवादक विश्व प्रकाशगुप्त यस चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली 1970
11. पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन का इतिहास–डॉ0 पुखराज जैन, फस्ट एडीशन, 2008 पृ0.8, साहित्य भवन पब्लिकेशन–आगरा
12. पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन का इतिहास–डॉ0 पुखराज जैन, फस्ट एडीशन, 2008 पृ0 103, साहित्य भवन पब्लिकेशन–आगरा
13. पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन का इतिहास–डॉ0 पुखराज जैन, फस्ट एडीशन, 2008 पृ0 138, साहित्य भवन पब्लिकेशन–आगरा

14. पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन का इतिहास–डॉ0 पुखराज जैन, फस्ट एडीशन, 2008 पृ0 145, साहित्य भवन पब्लिकेशन–आगरा
15. पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन का इतिहास–डॉ0 पुखराज जैन, फस्ट एडीशन, 2008 पृ0 150, साहित्य भवन पब्लिकेशन–आगरा
16. पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन का इतिहास–डॉ0 पुखराज जैन, फस्ट एडीशन, 2008 पृ0 165, साहित्य भवन पब्लिकेशन– आगरा
17. मानव अधिकार–डॉ0 जय जय राम, उपाध्याय, 2007 पृ0 9, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी–इलाहाबाद
18. पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन का इतिहास–डॉ0 पुखराज जैन, प्रथम एडीशन, 2008 पृ0 228, साहित्य भवन पब्लिकेशन–आगरा
19. किरन कम्पटीशन टाइम्स– इलाहाबाद पृ0 103, मासिक पत्रिका – 2006
20. मानवाधिकारों का संघर्ष–मानवाधिकारो की अर्थनय–राजकिशोर, पृ0 111, 2011 वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली